एक्स, वाई, जेड बनाम
मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य
2022 की आपराधिक अपील संख्या 1184-
05 अगस्त, 2022

यह अपील मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय की ग्वालियर खण्डपीठ के एकल न्यायाधीश के 06 जनवरी 2022 के फैसले से उत्पन्न हुई है, जिसमें दण्ड प्रक्रिया संहिता 973 के धारा 482 के तहत एक आवेदन को खारिज कर दिया गया था।

अपीलार्थी लक्ष्मीबाई राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा संस्थान, ग्वालियर में योग प्रशिक्षक के रूप में कार्यरत हैं। दूसरा प्रतिवादी, उस समय संस्थान का कुलपति था। अपीलकर्ता का आरोप है कि मार्च 2019 में, दूसरे प्रतिवादी ने संस्थान में उसे अनुचित तरीके से छुआ, जिसपर उसने खुद को अलग कर लिया और उसपर चिल्लाई। 14 अक्टूवर 2019 को उसने पुलिस थाना गोले का मंदिर, ग्वालियर में शिकायत दर्ज करायी, यह आशंका करते हुए कि पुलिस ने कोई कार्रवाई नही की, उसने 15 अक्टूबर 2019 को पुलिस अधीक्षक सिटी सेन्टर ग्वालियर को एक शिकायत प्रस्तुत की। यह पाते हुए कि उसकी शिकायत पर कोई कार्रवाई नही की गयी, अपीलकर्ता ने पुलिस अधीक्षक को एक और शिकायत प्रस्तुत की। 18 फरवरी 2020 को और सी. दोनों अधीक्षक के साथ साथ 24 फरवरी 2020 को फिर से पी.एस. गोले का मंदिर है। आखिरकार, अपीलकर्ता ने सी.आर.पी.सी. की धारा 156 (3) के तहत न्यायिक मजिस्ट्रेट प्र 0 श्रे0 ग्वालियर का रूख किया। 26 फरवरी 2020 को जे.एम.एफ.सी. ने पुलिस को स्थिति रिर्पोट दर्ज करने का निर्देश दिया। ऐसा प्रतीत होता है कि कोविड -19 महामारी की शुरूआत के कारण जे .एम.एफ.सी. के समक्ष कार्यवाही में देरी हुई।

इसी बीच अपीलकर्ता ने संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रीट याचिका में मध्यप्रदेश के उच्च न्यायालय में इस शिकायत के साथ याचिका दायर की, कि उसके आरोपों की जांच नही की जा रही , जिनके जांच यौन उत्पीड़न के प्रावधानों के तहत की जानी चाहिए थी। कार्य स्थल पर महिलाओं का उत्पीड़न (रोकथाम संरक्षण और निवारण) अधिनियम 2013 ।

युवा मामले और खेल मंत्रालय की मंजूरी से 29 मई 2020 को एक आंतरिक शिकायत समिति का गठन किया गया था। 21 सितम्बर 2020 की आई.सी.सी. की रिर्पोट में पाया गया कि दूसरे प्रतिवादी के खिलाफ जो आरोप लगाये थे , वे सही साबित हुए। आई.सी.सी. के पांच सदस्यों में से एक द्वारा एक असहमति नोट

प्रस्तुत किया गया था। इस न्यायालय को सूचित किया गया कि दूसरे प्रतिवादी ने आई.सी.सी के निष्कार्षों के खिलाफ अपील दायर की है।

11 नवम्बर 2020 को संस्थान के तत्कालीन कुलपति ने दूसरे प्रतिवादी को एक मात्र पत्र लिखकर कहा कि डी.बी.आर.एस. की चेंबर में स्थापित सी.सी.टी.बी. कैमरों की अगस्त और सितम्बर 2019 के महीनों की ऑडियो विडियो रिकॉर्डिंग है। तत्कालीन प्रभारी रजिस्ट्रार के अनुसार कुलपति को सामान सीलबंद पैकेट में सौंपा गया था। दूसरे प्रतिवादी को अगस्त और सितम्बर 2019 के महीनों के ऑडियों विडियो रिकॉर्डिंग के डी.वी.आर. युक्त सिलबंद पैकेट कराने का निर्देश दिया गया था।

21 दिसम्बर 2020 को जे.एम.एफ.सी. ने निर्देश दिया कि संबंधित पुलिस स्टेशन से स्थिति रिर्पोट मांगी जाय और उस उद्देश्य के लिए थाना प्रभारी को एक पत्र जारी किया जाय। 8 जुलाई 2021 प्रभारी अधिकारी, पुलिस स्टेशन गोले का मंदिर, जिला ग्वालियर द्वारा जे.एम.एफ.सी. के समक्ष एक स्थिति रिर्पोट दायर की गयी थी, जिसमें कहा गया था कि जांच के दौरान शिकायतकर्ता और आरोपी के बयान दर्ज किये गये थे। जिसमें संपूर्ण जांच में विभागीय कमियों के कारण शिकायतकर्ता के विरूद्ध विभागीय कार्यवाही की गई तथा इस प्रकार का अपराध घटित होना नही पाया गया।

23 जुलाई 2021 को प्रभारी कुलपति द्वारा दूसरे प्रतिवादी को एक पत्र भेजा गया जिसमें एक बार फिर उनके कार्यालय में रखे गये सी .सीटी.बी. कैमरो के डी.वी.आर.एस. की मांग दोहराई गयी और प्रभारी कुल सचिव द्वारा उन्हें सौंपे जाने की बात कही गयी थी।

16 अगस्त 2021 को पुलिस स्टेशन के प्रभारी ने जे.एम.एफ.सी. को सूचित किया गया कि मामले की जांच पुरी नही हुई है और आगे की स्थिति रिर्पोट जमा करने के लिए समय दिया जाना चाहिए। जे.एम.एफ.सी. के द्वारा पुलिस स्टेशन के प्रभारी को 9 सितम्बर 2021 तक अदालत के समक्ष स्थिति रिर्पोट प्रस्तुत करने के लिए एक अनुस्मारक भेजा गया था। इसके बाद 11 सितम्बर 2021 को जे.एम.एफ.सी. प्र0श्रे0 द्वारा पुलिस अधीक्षक को एक पत्र लिखकर मांग की गयी थी और थाना प्रभारी को 20 सितम्बर 2021 तक एक रिर्पोट प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया था। 20 सितम्बर 2021 को जे.एम.एफ.सी. ने यह दर्ज किया कि स्थिति रिर्पोट प्राप्त हो गई है और तद्नुसार 20 अक्टूवर 2021 को आवेदक की दलीलें सुनने क लिए कार्यवाही पोस्ट की गई है।

29 अक्टूबर 2021 को संस्थान के प्रभारी कुलपति ने पुलिस स्टेशन के थाना प्रभारी को एक पत्र लिखकर यह आरोप लगाया कि डी .वी.आर. का एक सीलबंद पैकेट दूसरे प्रतिवादी, तत्कालीन कुलपति को सौंप दिया गया था , उनके मौखिक निर्देश पर और डी.वी.आर. के उत्पादन
के लिए संचार के बावजूद उन्हें उपलब्ध कराया गया था। संचार नोट ऑडियो विडियो रिकॉर्डिंग का समय मांगा गया था और संस्थान में अनुपलब्ध पाये गये चोरी के कृत्य में अनाधिकृत रूप से हटा दिया गया।

2 नवम्बर 2021 के एक आदेश द्वारा जे.एम.एफ.सी. ने पाया कि अपीलकर्ता ने एक शिकायत दर्ज की थी जिसमें आरोप लगाया गया था कि दूसरा प्रतिवादी जो संस्थान का कुलपति था उसका यौन उत्पीड़न कर रहा था। उसे और उसकी मांगो को अस्वीकार करने पर उसे सेवा से बर्खास्त करने की धमकी दी गई थी। शिकायतकर्ता ने बताया कि उसके रिकार्डिंग को नुकसान पहुंचाने के लिए संस्थान के अन्य अधिकारियों विभागअध्यक्ष, एक शिक्षक और रजिस्टार ने फर्जी दस्तावेज बनाकर दूसरे प्रतिवादी के साथ साजिश रची। इस पृष्ठ भूमि में जे .एम.एफ.सी. ने पाया -

‘‘ शिकायतकर्ता द्वारा आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ गंभीर आरोप लगाये गये हैं, इस संबंध ने दस्तावेजों के अवलोकन से शिकायतकर्ता के बयान संतोषजनक पाये गये हैं। हलांकि पुलिस स्टेशन, गोले के मंदिर द्वारा एक जांच रिर्पोट प्रस्तुत की गई है जिसमंे कहा गया है कि शिकायत की जांच के दौरान दर्ज किये गये बयानों में शिकायतकर्ता द्वारा अपने सही दस्तावेजों के साथ छेड़ -छाड़ करने का आरोप लगाया गया है। आरोपी व्यक्तियों इण्डीबोरा , पायलदास, विवेकपाण्डेय, कर्नल जनक सिंह, सेखावत और दिलीप दूरेहा द्वारा शिकायत पर अवैध दबाव बनाने के साथ साथ उसपर दबाव डाला गया, छुट्टी मिलने के कारण और आरोपी दिलीप द्वारा बुरी नियत से छूने के कारण। डुरेहा के पूर्व मंे उपरोक्त आरोपतियों के खिलाफ पुलिस स्टेशन गोला का मंदिर में शिकायत दर्ज करायी और रिट याचिका 5625/2020 पूर्व में लंबित बतायी गयी थी।

माननीय उच्च न्यायालय स्टेटस रिर्पोट में यह भी बताया गया है कि पूर्व में भी फरियादी द्वारा उक्त संबंध में थाना गोला का मंदिर में शिकायत दर्ज करायी गयी थी, जिसकी जांच उप निरक्षक रश्मी भदौरिया के द्वारा की गई थी। जांच के दौरान शिकायतकर्ता और आरोपी के बयान दर्ज किये गये। जिसमें पुरी जांच से लेकर उसके खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू की गई।

शिकायतकर्ता द्वारा विभागीय कमियों के कारण कोई घटना यह अपराध घटित होना नही पाया गया। मामले में, केवल अदालत के माध्यम से एकत्र किये

गये साक्षियों के आधार पर मामले का फैसला सुनाया जा सकता है। शिकायतकर्ता द्वारा शिकायत में बताये गये तथ्यों से प्रथम दृष्टया आरोपी व्यक्तियों द्वारा अपराध घटित होना दर्शाया गया है। इस संबंध में यह संभव है कि पुलिस से साक्ष्य एकत्र किये बिना मामले का फैसला किया जा सकता है। इन परिस्थितियों में शिकायकर्ता की ओर से धारा 156 (3) सी.आर.पी.सी के तहत दायर मामले पर कार्यवाही करना न्यायसंगत और उचित प्रतीत नही होता है। शिकायतकर्ता की ओर से धारा 156 (3) सी.आर.पी.सी. के तहत शिकायत दायर की गयी। इसे शिकायत का मामला माना जायेगा और शिकायतकर्ता चाहे तो आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ सी.आर.पी.सी. की धारा 200 और 202 के तहत अपना बयान दे सकती है। इसके बाद पंजीकरण पर विचार किया जायेगा।

मामले को आगे की कार्यवाही के लिए तय किया गया था।

मामले को आगे की कार्यवाही के लिए 13.12.2021 को रखा गया।

उपरोक्त आदेश से जे.एम.एफ.सी. इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि, प्रथम दृष्टया आरोपी द्वारा अपराध की घटना दिखाई गयी थी। बहरहाल जे.एम.एफ.सी. ने माना कि मामले का फैसला पुलिस से सबुत इकट्ठा किये बिना किया जा सकता है और सी.आर.पी.सी की धारा 156 (3) के तहत अपीलकर्ता की ओर से दायर मामले पर कार्यवाही करना न्याय संगत और उचित नही लगता है। जे .एम.एफ.सी. ने अपीलकर्ता को धारा 200 और 202 सी.आर.पी.सी. के तहत अपना बयान दर्ज कराने के लिए उपस्थित होनी की छुट देकर शिकायत को एक शिकायत मामले के रूप में माना। जे.एम.एफ.सी. के आदेश पर अपीलकर्ता द्वारा धारा 482 सी.आर.पी.सी. के तहत सवाल उठाया गया था। 6 जनवरी 2022 के एक आदेश द्वारा उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने आवेदन खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय ने माना कि जे.एम.एफ.सी. पुलिस को एफ.आई.आर. दर्ज करने का निर्देश देने के लिए बाध्य नही था और सी .आर.पी.सी. की धारा 156 (3) में हो सकता है , अभिव्यक्ति के उपयोग से संकेत मिलता है कि जे .एम.एफ.सी. के पास शिकायतकर्ता को गवाहों की जांच करने का निर्देश देने का विवेक था। उच्च न्यायालय ने यह भी माना कि यदि जे.एम.एफ.सी. सी.आर.पी.सी की धारा 200 और 202 के तहत गवाहों की जांच करके आगे बढ़ने का फैसला करती है तो उसके पास अभी भी मांग करने का विकल्प होगा। पुलिस द्वारा जांच, उस स्तर पर, के तहत एक जांच निर्देश देकर अपने बयानों के पूर्व रिकॉर्डिंग की स्वतंत्रता देकर शिकायत के मामले का निपटारा किया।

जे.एम.एफ.सी. के आदेश पर अपीलकर्ता द्वारा 482 सी.आर.पी.सी. के तहत सवाल उठाया गया था। 6 जनवरी 2022 के एक आदेश द्वारा उच्च न्यायालय

के एक न्यायधीश ने आवेदन खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय ने माना की जे.एम.एफ.सी. पुलिस को एफ.आई.आर. दर्ज करने का निर्देश देने के लिए बाध्य नही था और सी.आर.पी.सी. की धारा 156 3 में हो सकता है '' अभियव्यक्ति के उपयोग से संकेत मिलता है कि जे.एम.एफ.सी. के पास शिकायतकर्ता को गवाहों की जांच करने का आदेश देने का विवेक था। धारा 156 3 के तहत जांच का निर्देश देने के बजाय, धारा 200 और 202 सी.आर.पी.सी. के तहत। उच्च न्यायालय ने यह भी माना कि यदि जे.एम.एफ.सी. सी.आर.पी.सी. की धारा 200 और 202 के तहत गवाहों की जांच करके आगे बढ़ने का फैसला करती है तो उसके पास अभी भी पुलिस के द्वारा अनुसंधान कराने का विकल्प होगा। धारा 202 के तहत जांच का निर्देश देकर।

हमने अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित वरिष्ठ वकील सुश्री अनीता शेनोय , दूसरे प्रतिवादी की ओर से उपस्थित वरिष्ठ वकील श्री आर 0 बसंत, तीसरे से छठे उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित वकील श्री अभय सिंह , और बी0 की ओर से उपस्थित वकील श्री गोपाल झा को सुना है, जो राज्य की ओर से उपस्थित वकील हैं।

सबसे पहले जब भी किसी शिकायत ने संज्ञेय अपराध का मामला बनता है तो हम एफ.आई.आर. दर्ज करने के पुलिस के कर्तव्य को दोहराना उचित समझते हैं। ललीता कुमारी बनाम उतर प्रदेश सरकार इस मामले में इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने निर्णय के निम्नलिखित उदाहरण में संक्षिप्त में कानून की स्थिति बताई है।

'' इसलिए, पंजीकरण या गैरपंजीकरण के संबंध में विभिन्न प्रतिवादों को देखते हुए जो आवश्यक है वह केवल यह है कि पुलिस को दी गई जानकारी से संज्ञेय अपराध का घटित होने का खुलासा होना चाहिए। ऐसी स्थिति में, एफ.आई. दर्ज करना अनिवार्य है। हालांकि यदि दी गई जानकारी में कोई संज्ञेय अपराध नही बनता है, तो तुरंत एफ.आई.आर. दर्ज करने की आवश्यकता नही है और शायद पुलिस यह सुनिश्चित करने के सीमित उद्देश्य के लिए एक प्रकार का

प्रारंभिक सत्यापन या पूछताछ कर सकती है कि क्या संज्ञेय अपराध किया गया है। लेकिन यदि दी गई जानकारी में स्पष्ट होता है कि संज्ञेय अपराध का उल्लेख है तो तुरंत एफ.आई.आर. दर्ज करने के अलावा और कोई विकल्प नही है। एफ.आई.आर. दर्ज करने के चरण में अन्य विचार प्रासांगिक नही है जैसे कि क्या जानकारी गलत दी गई है, क्या जानकारी वास्तविक है क्या जानकारी विश्वसनीय है इत्यादि। ये ऐसे मुद्दे हैं जिन्हें जांच के दौरान सत्यापित किया जाना है। एफ.आई.आर. दर्ज करने के चरण में केवल यह देखा जाना चाहिए कि क्या दी गई

जानकारी संज्ञेय अपराध का खुलासा करती है यदि जांच के बाद दी गई जानकारी झूठी पाई जाती है, तो झुठी एफ.आई.आर. दर्ज करने के लिए शिकायतकर्ता पर मुकदमा चलाने का विकल्प हमेशा मौजूद होता है। ‘‘

हम इस बात को ध्यान में रखें बिना नही कह सकते कि इस मामले में पुलिस की निष्कर्षता अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है। यह प्रत्येक पुलिस अधिकारी का परम कर्तव्य है कि वह अपने कार्यों को सार्वजनिक रूप से निष्पादित करें। पुलिस को इस तथ्य से अवगत होना चाहिए कि वे आमतौर पर किसी अपराध के पीड़ित या शिकायतकर्ता के लिए संपर्क का पहला बिन्दु होते हैं। उन्हें कानून का पालन करना चाहिए और एफ.आई.आर. के सुचारू पंजीकरण को सक्ष्मा करना चाहिए। कहने की जरूरत नही है कि उन्हें जनता के सभी सदस्यों के साथ उचित और निष्पक्ष तरीके से व्यवहार करना चाहिए। यौन उत्पीड़न या हिंसा के मामलो में यह और भी आवश्यक है कि जहां पीड़ितों (जो आम तौर पर महिलाएं होती है) को शिकायत दर्ज करने का प्रयास करने पर बड़े सामाजिक कलंक का सामना करना पड़ता है। सामाज के विभिन्न वर्ग उतरजीवी को शिकायत दर्ज न करने या अन्य औपचारिक कार्यवाही शुरू न करने के लिए मनाने का प्रयास करते हैं , और वे अक्सर सफल रहते हैं। अंततः पुलिस स्टेशन का दौरा करना और पुलिस अधिकारियों के साथ बात-चीत करना कई लोगों के लिए एक डराने वाला अनुभव हो सकता है। यदि पुलिस स्टेशन जाने का कारण यौन अपराध की शिकायत करना है तो यह असुविधा अक्सर बढ़ जाती है।

ऐसा होने पर पुलिस को यौन उत्पीड़न के संबंध में शिकायत मिलने के बावजूद एफ.आई.आर. दर्ज करने से इन्कार करके एक और बाधा पैदा नही करनी चाहिए। बल्कि उन्हें शिकायतकर्ता को सहज बनाना चाहिए और भयमुक्त महौल बनाने का प्रयास करना चाहिए। उन्हें उसकी मानसिक स्थिति और इस तथ्य के प्रति संवेदनशील होना चाहिए कि वह हाल ही में एक दर्दनाक अनुभव से गुजरी होगी।

जिस अपराध की शिकायत की गयी है वह सही है या नही इसका निर्धारण जांच और/या सुनवाई के स्तर पर किया जायेगा। यदि जांच करने के बाद पुलिस को पता चलता है कि कोई अपराध नही बनता है तो वे सी .आर.पी.सी. की धारा 173 के तहत भी रिर्पोट दर्ज कर सकते हैं। हलांकि एफ .आई.आर. दर्ज करने से इन्कार करना उनके लिए खुला नही है। इस संबंध मंे कानून स्पष्ट है पुलिस अधिकारी कोई शिकायत प्राप्त होने पर किसी भी विवेक का प्रयोग नही कर सकते हैं। जो एक संज्ञेय अपराध के घटित होने का खुलासा करता है।

दूसरा, हम सी.आर.पी.सी. की धारा 156 (3) के तहत शक्तियों के प्रयोग के संबंध में मजिस्टे[a]क को दिये गये विवेक के मुद्दे से निपटते हैं। इस मुद्दे पर उच्च न्यायालय ने माना है कि जे .एम.एफ.सी. पुलिस को एफ.आई.आर. दर्ज करने का निर्देश देने के लिए बाध्य नही था और सी .आर.पी.सी. की धारा 156 (3) में अभिव्यक्ति ''हो सकता है'' के उपयोग से संकेत मिलता है कि जे .एम.एफ.सी. के पास निर्देश देने का विवेक था। शिकायतकर्ता को धारा 156 (3) के तहत जांच का निर्देश देने के बजाय धारा 200 और 202 सी.आर.पी.सी. के तहत गवाहों से पूछ-ताछ करनी चाहिए।

साकिरी बासु बनाम यू 0 पी0 राज्य इस न्यायालय के खण्डपीठ। सी.आर.पी.सी. की धारा 156(3) के तहत मजिस्ट्रेट की शक्तियों की व्याख्या। इस निर्णय में न्यायालय ने कहा - इस संबंध में हम बताना चाहेंगे कि यदि किसी व्यक्ति को शिकायत है कि पुलिस स्टेशन उसके एफ .आई.आर. धारा 154 सी.आर.पी.सी. के तहत दर्ज नही कर रहा है, तो वह पुलिस अधीक्षक से धारा 154 (3) सी.आर.पी.सी. के तहत एक आवेदन पत्र के माध्यम से संपर्क कर सकता है। भले ही इससे इस अर्थ में कोई संतोषजनक परिणाम नही मिलता है कि या तो एफ.आई.आर. अभी दर्ज नही की गयी है, या इसे दर्ज करने के बाद भी कोई उचित जांच नही हुई है, तो पीड़ित व्यक्ति धारा 156(3) के तहत आवेदन दायर करने के लिए खुला है। यदि धारा 156(3) के तहत कोई आवेदन मजिस्ट्रेट के समक्ष दायर किया जाता है तो मजिस्ट्रेट एफ.आई.आर. दर्ज करने का निर्देश दे सकता है और ऐसे मामले में जहां पीड़ित व्यक्ति के अनुसार उचित जांच नही की गयी है, उचित जांच करने का भी निर्देश दे सकता है। उचित जांच सुनिश्चित करने के लिए मजिस्ट्रेट भी इसी प्रावधान के तहत जांच की निगरानी कर सकता है।

दिलावर सिंह बनाम दिल्ली राज्य में भी इस न्यायालय द्वारा यही दृष्टिकोण अपनाया गया था। हम आगे स्पष्ट करेंगे कि भले ही एफ .आई.आर. दर्ज की गयी हो और भले ही पुलिस ने जांच की हो, यह वास्तव में जांच कर रही हो जो कि पीड़ित व्यक्ति को उचित नही लगता है, ऐसा व्यक्ति धारा 156 के तहत मजिस्ट्रेट से संपर्क कर सकता है। सी.आर.पी.सी. और यदि मजिस्ट्रेट संतष्ट है तो उचित जांच का आदेश दे सकता है और अन्य उपयुक्त कदम उठा सकता है और ऐसे आदेश पारित कर सकता है जो वह उचित जांच सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक समझता है। ये सभी शक्तियां एक मजिस्ट्रेट को सी .आर.पी.सी. की धारा 156(3) के तहत प्राप्त होती है।

धारा 156(3) अध्याय ग्प्प् सी.आर.पी.सी. के तहत अपने कर्तव्यों का पालन करने वाली पुलिस पर मजिस्ट्रेट द्वारा जांच का प्रावधान करती है। ऐसे मामलो में जहां मजिस्ट्रेट को पता चलता है कि पुलिस जांच का अपना कर्तव्य नही निभाया

है या उसने इसे संतोषजनक ढंग से नही किया है तो वह पुलिस को ठीक से जांच करने का निर्देश जारी कर सकता है, और उसके निगरानी कर सकता है।

हमारी राय में सी.आर.पी.सी. की धारा 156(3) एक मजिस्ट्रेट में ऐसी सभी शक्तियों को शामिल करने के लिए पर्याप्त व्यापक है जो उचित जांच सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है, और इसमें एफ.आई.आर. दर्ज करने का आदेश और उचित जांच करने का आदेश देने की शक्ति भी शामिल है अगर मजिस्ट्रेट इस बात से संतुष्ट है कि पुलिस द्वारा उचित जांच नही की गयी है , या नही की जा सकती है। सी.आर.पी.सी. की धारा 156(3) हलांकि संक्षिप्त में लिखी गयी है हमारी राय में यह बहुत व्यापक है और ऐसी भी आकस्मिक शक्तियां शामिल होगी जो उचित जांच सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है।

यदि किसी व्यक्ति को शिकायत है कि उसकी एफ .आई.आर. पुलिस स्टेशन द्वारा दर्ज नही की गयी है तो उसका पहला उपाय सी .आर.पी.सी. की धारा 154(3) के तहत पुलिस अधीक्षक या धारा 36 सी.आर.पी.सी. में निर्दिष्ट अन्य पुलिस अधिकारी से संपर्क करना है। यदि पुलिस अधीक्षक यह धारा 36 निर्दिष्ट अधिकारी से संपर्क करने के बावजूद भी उसकी शिकायत बनी रहती है वह रीट याचिका या याचिका के माध्यम से उच्च न्यायालय में जाने के बजाय धारा 156 (3) सी.आर.पी.सी. के तहत मजिस्ट्रेट से संपर्क कर सकता है। इसके अलावा उसके पास सी.आर.पी.सी. की धारा 200 के तहत अपराधिक शिकायत दर्ज करने का एक और उपाय है। जब इतने सारे विकल्प उपाय मौजूद है तो रीट याचिकाओं या धारा 482 याचिकाओं पर विचार क्यांे किया जाना चाहिए।

उपरोक्त उदाहरण से यह स्पष्ट है कि मजिस्ट्रेट के पास 156(3) के तहत व्यापक शक्तियां है जिनका प्रयोग न्यायिक के उद्देश्यों को पुरा किया जाना चाहिए। श्रीनिवास गुंडलुरी बनाम एस.पी.पी.ओ. इलेक्ट्रोनिक पावर कंस्ट्रक्शन कॉर्पोरेशन मामले में इस न्यायालय की दो न्यायधीशों की खण्डपीठ ने मजिस्ट्रेट की शक्तियों को और स्पष्ट किया और माना कि जब भी कोई संज्ञेय अपराध बनता है , मजिस्ट्रेट पुलिस को जांच करने का निर्देश दे सकता है।

इसे स्पष्ट करने के लिए और श्री सिंगवी द्वारा उठाये गये संदेह के संबंध में संहिता की धारा 156(3) के तहत आगे बढ़ने के लिए , जो आवश्यक है वह शिकायत को पढ़ना और यदि यह एक संज्ञेय अपराध का खुलासा करता है तो इसके बजाय मजिस्ट्रेट शिकायत पर अपना दिमाग लगाकर यह तय करना कि आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है या नही , पुलिस को जांच के लिए निर्देशित कर सकता है। मौजूदा मामले में, विद्वान एकल न्यायधीश और उच्च न्यायालय की खण्डपीठ ने ठीक ही बताया है कि मजिस्ट्रेट में यह तय करने के लिए शिकायत

पर अपना विवेक नही लगाया कि आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है या नही और इसलिए हम इस पर विचार कर रहे हैं। यह विचार की मजिस्ट्रेट ने पुलिस को जांच के लिए निर्देश देकर कोई अवैधता नही की है। तथ्यों और परिस्थितियों में यह नही कहा जा सकता कि पुलिस को एफ.आई.आर. दर्ज करने का निर्देश देते हुए मजिस्ट्रेट ने कोई गैर कानूनी काम किया है। वास्तव में ऐसी रिर्पोट प्राप्त करने के बाद भी धारा 190 (1) (बी) के तहत

मजिस्ट्रेट अपराध का संज्ञान ले भी सकता है या नही। दूसरे शब्दो में , वह जांच अधिकारी द्वारा पुलिस रिर्पोट प्रस्तुत करने पर संज्ञान लेने के लिए बाध्य नही है , इसलिए, पुलिस को आरोप-पत्र यह अंतिम रिर्पोट दाखिल करने और किसी भी विशेष परिणाम के साथ जांच कराने का निर्देश देने से यह नही माना जा सकता कि मजिस्ट्रेट धारा 156 के उक्त अनुच्छेद (3) में दिये गये अनुसार अपनी शक्तियों को पार कर गया।

वर्तमान मामले में तथ्यों का वर्णन यह स्पष्ट करता है कि सी .आर.पी.सी. की धारा 156(3) के तहत मजिस्ट्रेट के क्षेत्राधिकार का अवाह्न करने पर जे.एम.एफ.सी. इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि आरोपी के खिलाफ गंभीर आरोप लगाये गये थे। अपीलकर्ता और इस संबंध में दस्तावेजों के अवलोकन से शिकायतकर्ता के बयान संतोषजनक थे। इस तथ्य पर ध्यान देने के बाद, कि पुलिस पहले चरण में रिर्पोट दी थी कि किसी घटना या अपराध का घटित होना नही पाया गया , जे.एम.एफ.सी. ने राय दी कि शिकायत में शिकायतकर्ता द्वारा बताये गये तथ्यों से प्रथम दृष्टया, किसी अपराध की घटना को दर्शाया गया था।

यह सच है कि '' हो सकता है'' शब्द का उपयोग यह दर्शाता है कि मजिस्ट्रेट के पास पुलिस को शिकायत मामले के रूप में मामले की जांच करने या आगे बढ़ने का विवेक है। लेकिन इस विवेक का प्रयोग मनमानी ढंग से नही किया जा सकता और इसे न्यायिक तर्क द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिए। ध्यान देने योग्य एक महत्वपूर्ण तथ्य , जिसपर विचार किया जाना चाहिए था , लेकिन ट्रायल कोर्ट या हाई कोर्ट ने इस पर विचार नही किया , वह यह है कि अपीलकर्ता ने सी.सी.टी.बी. फुटेज ऑडियो विडियो रिकॉर्डिंग वाले डी.वी.आर.एस. के उत्पादन की मांग की थी। तत्कालीन कुलपति (दूसरा प्रतिवादी) का कक्ष। वास्तव में संस्थान ने स्वंय दूसरे प्रतिवादी को रिकॉर्डिंग के उत्पादन का निर्देश देने के लिए संचार को संबोधित किया था , यह नोट करते हुए कि रिकॉर्डिंग संस्थान के तत्कालीन रजिस्ट्रार द्वारा उनके मौखिक निर्देश पर सौंपी गयी थी क्यूंकि वह कुलपति थे। कई प्रयासों के बावजूद प्रतिक्रिया के कमी के कारण , संस्थान ने डी.वी.आर. की

चोरी के लिए दूसरे प्रतिवादी के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज करने के लिए 29 अक्टूबर, 2021 को पी.एस. गोले का मंदिर में शिकायत भी दर्ज की थी।

इसलिए ऐसे मामलो में जहां मजिस्ट्रेट केवल शिकायत को प्रथम दृष्टया पर कथित संज्ञेय अपराध का होना पता है, बल्कि ऐसे तथ्य भी मजिस्ट्रेट के ध्यान में लाये जाते हैं जो स्पष्ट रूप से पुलिस जांच की आवश्यकता का संकेत देते हैं, धारा 156(3) में दिये गये विवेक को केवल इस रूप में पढ़ा जा सकता है कि पुलिस को जांच का आदेश देना मजिस्ट्रेट का कर्तव्य है। वर्तमान जैसे मामलों में, जिसमें आरोपी यह अन्य व्यक्तियों के भौतिक कब्जे में दस्तावेज या अन्य साक्ष्य होने का आरोप लगाया गया है, जिसे पुलिस सी.आर.पी.सी. के तहत अपनी शक्तियों का उपयोग करके जांच करने और पुनः प्राप्त करने के लिए सबसे अच्छे स्थिति में होगी, मामले को सुलझाना चाहिए ऐसे मामले को, जांच के लिए पुलिस को भेजा जाय।

विशेष रूप से यौन उत्पीड़न, या किसी तरह की किसी अपराधिक आरोप के मामलो में जिससे पीड़ित संभववतः पहले से ही सदमें मैं है अदालतों को शिकायतकर्ता पर और भोज नही डालना चाहिए और पुलिस पर जांच करने के लिए दबाव डालना चाहिए। इस तथ्य पर उचित ध्यान देना चाहिए कि शिकायतकर्ता के लिए अपनी शिकायत के संबंध में महत्वपूर्ण साक्ष्य पुनः प्राप्त करना संभव नही है। ऐसे सबूतो के आभाव में मामले की सच्चाई तक पहंुचना संभव नही होगा। पीड़ित शिकायतकर्ता को रिकार्ड पर प्रासंगिक सबूत (जो संभावित रूप से काफी संभावित मूल का है) लाने में सक्षम हुए बिना अपना मामला साबित करने की आवश्यकता होगी, जो अनिवार्य होगा।

इस पृष्ठभूमि में हमारा स्पष्ट मानना है कि जे.एम.एफ.सी. को सी.आर.पी.सी. की धारा 156(3) के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए पुलिस को जांच करने का निर्देश देना चाहिए था।

इस स्तर पर, अदालत को शिकायत में आरोपों की सत्यतता पर निर्णय लेने के लिए नही कहा जा सकता, शिवाय इसके की उस मामले में पुलिस द्वारा जांच के महत्व को रेखांकित किया जाये जहां सी.सी.टी.बी फुटेज या अन्य सबूत है। पर अपीलकर्ता के कब्जे या नियंत्रण में नही है, बल्कि पुलिस द्वारा जांच के दौरान पूछ-ताछ की जानी है। सी.आर.पी.सी की धारा 156(3) मजिस्ट्रेट को जो विवेकाधिकार प्रदान किया गया है, उसका प्रयोग विवेकपूर्ण तरीके से किया जाना चाहिए।

वर्तमान मामले के तथ्यों और इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून की स्थिति को ध्यान में रखते हुए सी.आर.पी.सी. की धारा 156(3) के तहत क्षेत्राधिकार का सहारा लेना उचित था।

उपरोक्त कारणों से, हम उच्च न्यायालय के आक्षेपित फैसले को रद्द करने और यह निर्देश देने के इच्छुक हैं कि जे .एम.एफ.सी. ग्वालियर उपर दी गयी टिप्पणीयों के संदर्भ में सी .आर.पी.सी की धारा 156(3) के तहत पुलिस द्वारा जांच का आदेश दें। निष्पक्ष जांच की आवश्यकता सहित सभी तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, हम निर्देश देते हैं कि जांच की निगरानी एक महिला अधिकारी द्वारा की जाएगी जो पुलिस अधीक्षक के पद से नीचे की न हो , जिसे संबंधित क्षेत्र के डी.आई.जी. द्वारा नामित किया जायेगा। तद्नुसार उच्च न्यायालय का 6 जनवरी 2006 का निर्णय रद्द किय जायेगा। जे.एम.एफ.सी. द्वारा इस आशय के निर्देश जारी किये गये हैं कि शिकायत को एक शिकायत मामले के रूप में माना जा सकता है, तद्नुसार, उस सीमा तक अलग रखा जायेगा और उपर जारी किये गये निर्देशों के अनुसार प्रतिस्थापित किया जायेगा। अंत में हम एक बार फिर यौन उत्पीड़न और यौन उत्पीड़न के शिकायतकर्ताओं से संवेदनशील तरीके से निपटने वाली अदालतों के महत्व को दोहराना चाहते हैं। सभी अदालतों के लिए इस तथ्य से अवगत रहना महत्वपूर्ण है कि कानूनी प्रक्रिया उन शिकायतकर्ताओं के लिए और भी कठिन हो जाती है जो यौन उत्पीड़न और हमले की पीड़ितों से जुड़े अनुचित कलंक के कारण संभावित रूप से आघात और सामाजिक संर्मिदंगी से जूझ रहे हैं। इस समय, विशेषकर ऐसे मामलों में जहां पुलिस ऐसी शिकायतकर्ताओं की शिकायत का समाधान करने में विफल रहती है , अदालतों की एक महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। जैसा कि दिल्ली उच्च न्यायालय ने बिरेन्द्र बनाम एन.सी.टी. दिल्ली राज्य में कहा था, अदालतों को पीड़ित के साथ संवेदनशील व्यवहार करने के साथ-साथ यह सुनिश्चित करने का कठिन कार्य भी करना होगा कि पुरी सच्चाई रिकॉर्ड पर लायी जाये ताकि निर्णय लेने और जबाव देने में आसानी हो।

अपराध को अंजाम देने वाले अभियुक्त की संलिप्तता से संबंधित मूल प्रश्न। उस मामले में, उच्च न्यायालय ने कहा कि - यह ध्यान देना चाहिए कि अभियोजन पक्ष गवाहों, वकील सहित कार्यवाही से संबंधित लोगों की सर्मिदंगी और आपतियों के परिणाम स्वरूप पीड़ित के अनुभव के आघात को छुपाया जा सकता है। न्यायाधीश को इन कारकों के प्रति सचेत रहना होगा कि और ऐसी किसी भी संदेह से उपर उठना होगा ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि वास्तविक तथ्यों और उन कार्यों को अस्पष्ट न करें जो आरोपी व्यक्तियों के लिए जिम्मेदार हैं। निचली अदालतों को अपने कंधो पर आने वाली महती जिम्मेदारी के प्रति सचेत रहना चाहिए और यौन शोसन मामलों में संवेदनशील होना चाहिए।

जबकि दिल्ली उच्च न्यायालय ने बलात्कार के एक मामले से निपटने के दौरान यह टिप्पणियां की, अदालतों को सभी प्रकार के यौन उत्पीड़न और यौन उत्पीड़न वाले मामलों में पीड़ितों के साथ संवेदनशील व्यवहार करने के अपने कर्तव्य के प्रति सचेत रहना चाहिए। अदालतों को यह सुनिश्चित करने का प्रयास करना चाहिए कि कथित अपराधियों को न्याय के कटघरे में लाने की कोशिश की प्रकिया पीड़ितों के लिए कठिन न हो। पीड़ित व्यक्तियों के अलावे शिकायत दर्ज करने और जांच करने के लिए दर-दर भटकना नही चाहिए खास कर तब जब उनकी शिकायत में प्रथम दृष्टया संज्ञेय अपराध का मामला बनता हो।

अर्पणा भट्ट बनाम मध्य प्रदेश राज्य मामले में इस न्यायालय की दो न्यायधीशों की खण्ड पीठ ने जुड़े हुए पीतृसत्तामक और स्त्री दोषी रवैये पर ध्यान दिया, जो कई बार न्यायिक आदेशों और निर्णयों में खेद जनक रूप से परिलक्षित होता है। '' उस मामले में न्यायमूर्ति एस. बिरेन्द्र भट्ट ने देखा और हम दोहराते हैं कि - सभी अदालतों की भूमिका यह सुनिश्चित करना है कि अपराधिक कार्यवाही के हर चरण में जहां वह उतरजीवी और पीड़ित पक्ष हैं, उतरजीवी उनकी निष्पक्षता और निष्पक्षता पर भरोसा कर सके। यहां तक की अभियुक्त की ओर से विवादस्पद संचारणों की अनुमति देकर, जो उसके एजेंसी को कमजोर करना चाहते हैं, यह अपराध जी के एक सक्रिय भागीदार (या अपराधी) के रूप में उसकी भूमिका को कम करके आंकना चाहते हैं , कई मामलों में अदालत पर डाली गयी इस जिम्मेदारी को प्रत्यक्ष रूप से कमजोर कर सकता है और अदालत की निष्पक्षता में बलात्कार पीड़िता (या अपराध के अभियुक्त) का विश्वास। महिलाओं क खिलाफ अपराधों के संबंध में वर्तमान रवैया आमतौर पर यह है कि बलात्कार जैसे गंभीर अपराध बर्दाश्त करने योग्य नही है और अपराधियों को दण्डित किया जाना चाहिए। हालांकि, यह केवल बलात्कार और लिंग अपराधिक शारीरिक हिंसा के अन्य गंभीर रूपों पर विचार करता है। भारतीय महिलाओं को जिन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है वे विकट हैं, इनमें सांस्कृतिक मूल्यों और मान्यताओं वाला एक स्त्री द्विवेषी सामाज , महिलाओं की रूढ़ीवादी भूमिका के बारे में पूर्वाग्रह , सामाजिक राजनीतिक संरचनाएं जो अत्यधिक पुरूष केन्द्रित है ज्यादातर कूननी प्रर्वतन संरचनाएं शामिल हैं। जो यह तो सामना नही कर सकते हैं, या सख्त और समय पर उपाय करने को तैयार नही है। इसलिए अदालती बयानों या आदेशों में मामले के लिए असंगत विचारो के माध्यम से इस रूढ़ीवादिता को सुदृढ़ करने से निष्पक्षता पर असर पड़ेगा।

वर्तमान निर्णय में उल्लेखित उदाहरण केवल दृष्टांत है, विचार यह है कि संवेदनशीलता की अधिकतम सीमा न्यायाधीश द्वारा अपनाये गये न्यायिक दृष्टिकोण, भाषा और तर्क में प्रदर्शित की जानी चाहिए। यहां तक की अदालत में

इस तरह के आदेश या कथन का एक अकेला उदाहरण भी देश की संपूर्ण न्यायिक प्रणाली पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है जिससे सभी को निष्पक्ष न्याय की गारंटी कम हो जाती है और विशेष रूप से यौन हिंसा के पीड़ितों (किसी भी प्रकार की सबसे गंभीर से लेकर पीड़ित तक के लिए)।

यौन अपराधिकयों के पीड़ितों को न्याय पाने में समक्ष बनाने के लिए विधायिका ने कई स्थानों पर अपराधिक प्रक्रिया को ढाला है ऐसा यौन अपराधों की गंभीरता और ऐसे मामलो को उचित संवेदनशील तरीके से संभालने की आवश्यकता को देखते हुए किया गया है। उदाहरण के लिए धारा 327 सी.आर.पी.सी. दण्ड संहिता 1860 की धारा 376, 376 ए, 376 बी, 376 सी, 376 डी, के तहत दण्डनीय अपराधों के संबंध में कैमरे के सामने सुनवाई करने का प्रावधान करती है। इस न्यायालय ने भी यह सुनिश्चित करने में अपनी भूमिका निभाई है कि न्याय पहुंच से बाहर न रहे। महाराष्ट्र राज्य बनाम बन्डु में इस न्यायालय ने निर्देश दिया कि यौन अपराधों के पीड़ितों सहित कमजोर गवाहों के गवाही को सुविधाजनक बनाने के लिए प्रत्येक राज्य में विशेष केन्द्र स्थापित किये जाय। स्मृति तुकाराम बडाने बनाम महाराष्ट्र राज्य में इस न्यायालय की दो न्यायधीशों की पीठ हममें से कौन, डॉ0 डी.बाई. चन्द्रचुड, जे.के. हिस्सा थे) ने बुन्डु / दौलत के संबंध में जारी निर्देशों को पूरक बनाया गया। ऐसे विशेष केन्द्र स्थापित करना ट्रायल कोर्ट का यह कर्तव्य और जिम्मेदारी है कि वह अपने समक्ष पीड़ित व्यक्तियों के साथ उचित तरीके से व्यवहार करें -

1. जहां उचित हो, सी.आर.पी.सी. की धारा 27 के तहत या जब मामले में पीड़ित व्यक्ति या अन्य गवाह यौन उत्पीड़न/हिंसा के अपने अनुभव की गवाही दे रहा हो तो कैमरे के सामने कार्यवाही की अनुमति देना।
2. यह सुनश्चित करने के लिए स्क्रीन लगाने की अनुमति देना कि पीड़ित महिला को गवाही देते समय या वैकल्पिक रूप से आरोपी को न देखना पड़े , पीड़ित महिला की गवाही दर्ज होने के दौरान आरोपी को कमरे से बाहर जाने का निर्देश देना।
3. यह सुनिश्चित करना कि आरोपी का वकील सम्मानजनक ढंग से और अनुचित प्रश्न पूछे बिना, विशेष कर पीड़ित महिला के यौन इतिहास के संबंध में, पीड़ित महिला से जिरह करें। जिरह इस तरह से भी की जा सकती है कि आरोपी का वकील अदालत को अपने सवाल सौंपता है, जो फिर उन्हें पीड़ित महिला के सामने रखता है।
4. जहां तक संभव हो जिरह एक ही बैठक में पूरी करें।
5. समापन से पहले, यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि इस न्यायालय ने शिकायत में लगाये गये आरोपों पर कोई राय व्यक्त नही की है। कानून के

मुताबिक उन आरापों की जांच करना जांच अधिकारी का काम है। उपरोक्त शर्तों के तहत अपील स्वीकार की जायेगी।

6. लम्बित आवेदन यदि कोई हो, यदि निपटारा किया जाता है।

अपील स्वीकृत।

Translated by

Shikha Rani Tigga